20 Aug

रोजगार का संकट

अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन और एशियाई विकास बैंक की हाल में आई एक साझा रिपोर्ट में भारत में रोजगार की स्थिति को लेकर जो चिंता जताई गई है, उसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। रिपोर्ट में कहा गया है कि कोरोना महामारी से निपटने के लिए की गई पूर्णबंदी के कारण भारत में इकतालीस लाख से ज्यादा लोग बेरोजगार हुए हैं और इनमें ज्यादातर लोग कृषि और विनिर्माण क्षेत्र से जुड़े हुए थे। इसमें कोई संदेह नहीं कि पूर्णबंदी के दौरान जिस तरह आर्थिक और औद्योगिक गतिविधियां ठप हुई हैं, उन्हें पटरी पर लाने में अभी खासा वक्त लग जाएगा। ऐसे में सरकार के समक्ष बड़ी चुनौती लोगों को रोजगार मुहैया कराने की है। एक तो वे लोग जिनका रोजगार इस पूर्णबंदी के दौरान छिन गया, उन्हें फिर से काम मिले और दूसरे वे बेरोजगार, जो पहले से नौकरी की तलाश में भटक रहे हैं, उन्हें भी रोजगार मुहैया कराया जाए। रिपोर्ट इस बात की ओर इशारा कर रही है कि बेरोजगारों में सबसे ज्यादा असर बीस से पच्चीस साल के युवकों पर ज्यादा पड़ा है, जिन्हें हाल में कोई काम-धंधा मिला था, लेकिन पूर्णबंदी के कारण वह छूट गया। ज्यादा चिंताजनक यह है कि देश की अर्थव्यवस्था जिस गंभीर संकट से गुजर रही है, उसका प्रभाव अभी लंबे समय तक बने रहना है। ऐसे में लोगों का काम-धंधा किस तरह से शुरू हो, इसका कोई समाधान नहीं दिख रहा है।

अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन और एशियाई विकास बैंक की हाल में आई एक साझा रिपोर्ट में भारत में रोजगार की स्थिति को लेकर जो चिंता जताई गई है, उसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। रिपोर्ट में कहा गया है कि कोरोना महामारी से निपटने के लिए की गई पूर्णबंदी के कारण भारत में इकतालीस लाख से ज्यादा लोग बेरोजगार हुए हैं और इनमें ज्यादातर लोग कृषि और विनिर्माण क्षेत्र से जुड़े हुए थे। इसमें कोई संदेह नहीं कि पूर्णबंदी के दौरान जिस तरह आर्थिक और औद्योगिक गतिविधियां ठप हुई हैं, उन्हें पटरी पर लाने में अभी खासा वक्त लग जाएगा। ऐसे में सरकार के समक्ष बड़ी चुनौती लोगों को रोजगार मुहैया कराने की है। एक तो वे लोग जिनका रोजगार इस पूर्णबंदी के दौरान छिन गया, उन्हें फिर से काम मिले और दूसरे वे बेरोजगार, जो पहले से नौकरी की तलाश में भटक रहे हैं, उन्हें भी रोजगार मुहैया कराया जाए। रिपोर्ट इस बात की ओर इशारा कर रही है कि बेरोजगारों में सबसे ज्यादा असर बीस से पच्चीस साल के युवकों

पर ज्यादा पड़ा है, जिन्हें हाल में कोई काम-धंधा मिला था, लेकिन पूर्णबंदी के कारण वह छूट गया। ज्यादा चिंताजनक यह है कि देश की अर्थव्यवस्था जिस गंभीर संकट से गुजर रही है, उसका प्रभाव अभी लंबे समय तक बने रहना है। ऐसे में लोगों का काम-धंधा किस तरह से शुरू हो, इसका कोई समाधान नहीं दिख रहा है।

अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन और एशियाई विकास बैंक की हाल में आई एक साझा रिपोर्ट में भारत में रोजगार की स्थिति को लेकर जो चिंता जताई गई है, उसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। रिपोर्ट में कहा गया है कि कोरोना महामारी से निपटने के लिए की गई पूर्णबंदी के कारण भारत में इकतालीस लाख से ज्यादा लोग बेरोजगार हुए हैं और इनमें ज्यादातर लोग कृषि और विनिर्माण क्षेत्र से जुड़े हुए थे। इसमें कोई संदेह नहीं कि पूर्णबंदी के दौरान जिस तरह आर्थिक और औद्योगिक गतिविधियां ठप हुई हैं, उन्हें पटरी पर लाने में अभी खासा वक्त लग जाएगा। ऐसे में सरकार के समक्ष बड़ी चुनौती लोगों को रोजगार मुहैया कराने की है। एक तो वे लोग जिनका रोजगार इस पूर्णबंदी के दौरान छिन गया, उन्हें फिर से काम मिले और दूसरे वे बेरोजगार, जो पहले से नौकरी की तलाश में भटक रहे हैं, उन्हें भी रोजगार मुहैया कराया जाए। रिपोर्ट इस बात की ओर इशारा कर रही है कि बेरोजगारों में सबसे ज्यादा असर बीस से पच्चीस साल के युवकों पर ज्यादा पड़ा है, जिन्हें हाल में कोई काम-धंधा मिला था, लेकिन पूर्णबंदी के कारण वह छूट गया। ज्यादा चिंताजनक यह है कि देश की अर्थव्यवस्था जिस गंभीर संकट से गुजर रही है, उसका प्रभाव अभी लंबे समय तक बने रहना है। ऐसे में लोगों का काम-धंधा किस तरह से शुरू हो, इसका कोई समाधान नहीं दिख रहा है।

SANSAR EDITORIAL

21 Aug

सुविधा की भर्ती

सरकारी नौकरियों के लिए होने वाली प्रतियोगी परीक्षाओं को लेकर युवाओं को साल भर परेशान होते देखा जाता है। अलग-अलग राज्यों के अलग-अलग विभाग अपनी जरूरत के हिसाब से रिक्तियां विज्ञापित और फिर उनके लिए चयन प्रक्रिया शुरू करते देखे जाते हैं। ऐसे में

युवाओं को हर विभाग और हर रिक्ति के लिए अलग-अलग आवेदन करने और फिर उनकी प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए भागदौड़ करनी पड़ती है। इस तरह उनका समय और पैसा दोनों काफी बर्बाद होता है।

इसके मद्देनजर केंद्र सरकार ने सभी गैर-तकनीकी पदों के लिए आयोजित होने वाली भर्ती प्रक्रिया को आसान बनाने के मकसद से राष्ट्रीय भर्ती एजंसी गठित करने का फैसला किया है। अभी तक रेलवे, बैंकिंग जैसे विभिन्न सरकारी विभागों की भर्तियों के लिए करीब बीस आयोग काम करते हैं। अब उन्हें राष्ट्रीय भर्ती एजंसी में समाहित कर दिया जाएगा। अगले तीन सालों में यह एजंसी पूरी तरह काम करने लगेगी। इसके तहत सभी जिलों में परीक्षा केंद्र बनाए जाएंगे, ताकि युवाओं को इधर-उधर न भटकना पड़े। जाहिर है, इस एजंसी के गठन से युवाओं को नौकरियों के लिए आवेदन करने से लेकर प्रतियोगी परीक्षाओं में बैठने तक में काफी सहूलियत होगी।

केंद्रीय और राज्य स्तर की प्रशासनिक सेवाओं के लिए होने वाली प्रतियोगी परीक्षाओं का आयोजन संघ लोकसेवा आयोग और राज्यों के आयोग करते हैं। प्रशासनिक अधिकारियों से नीचे के पदों, जैसे सचिवालयों आदि के कर्मियों की भर्तियां कर्मचारी चयन आयोग करता है। पर रेलवे, बैंकिंग आदि क्षेत्रों में भर्ती के अपने बोर्ड हैं।

अब प्रशासनिक पदों को छोड़ कर सभी विभागों की भर्ती प्रक्रिया एक ही केंद्रीकृत एजंसी कर सकेगी। इस तरह बैंकिंग, रेलवे भर्ती बोर्ड और कर्मचारी चयन आयोग एक में समाहित हो जाएंगे। जाहिर है, इससे न सिर्फ युवाओं की परेशानी कम होगी, बल्कि विभिन्न विभागों का खर्च भी बचेगा। लोकसेवा आयोग और राज्यों के आयोगों की प्रतियोगी परीक्षाओं का समय लगभग तय है।

इसी तरह कर्मचारी चयन आयोग की रिक्तियों और परीक्षाओं का समय भी निश्चित है, इसलिए युवा उनके लिए पहले से तैयार रहते हैं। फिर उनमें अनेक पदों के लिए एक ही आवेदन करना पड़ता है, एक ही बार शुल्क जमा करना होता है, इसलिए अलग-अलग फीस भरने और बार-बार परीक्षा की तैयारी करने की झंझट नहीं रहती।

जिन विभागों की भर्तियों के लिए अलग से प्रतियोगी परीक्षाएं आयोजित होती हैं, उनका समय भी तय नहीं होता और वे अपने तरीके से पर्चे तैयार करते हैं, इस तरह अलग-अलग विभागों के अलग-अलग परीक्षा प्रारूप हैं। स्वाभाविक ही, इस तरह युवाओं को हर परीक्षा को ध्यान में रखते हुए तैयारी करनी पड़ती है। लिहाजा, उन पर साल प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए पढ़ाई करने का दबाव और तनाव बना रहता है।

पहले इंजीनियरिंग, मेडिकल आदि विभिन्न पाठ्यक्रमों में दाखिले के लिए भी इसी तरह युवाओं को अलग-अलग आवेदन करने और भाग-दौड़ कर परीक्षाएं देनी पड़ती थीं। उन्हें केंद्रीकृत किया गया और फिर उनके लिए राष्ट्रीय परीक्षा एजंसी का गठन किया गया। इससे उन परीक्षाओं में विद्यार्थियों को काफी सहूलियत हो गई।

उसी तरह नई गठित राष्ट्रीय भर्ती एजंसी भी काम करेगी और युवाओं, अभिभावकों, विभिन्न विभागों सभी के लिए सहूलियत हो जाएगी। अभी तक केंद्रीकृत व्यवस्था न होने की वजह से युवाओं, खासकर लड़कियों के साथ उनके अभिभावकों को भी विभिन्न परीक्षा केंद्रों के चक्कर काटने पड़ते थे। विकलांग लड़कियों के लिए अलग तरह की परेशानियां उठानी पड़ती थीं। अब उन सारी झंझटों से मुक्ति का रास्ता खुलेगा।

22 Aug

अभाव का पाठ

इसमें कोई दो राय नहीं कि कोरोना के संक्रमण से बचाव फिलहाल एक प्राथमिक जरूरत है। इस स्थिति में सबसे बड़ी चुनौती शैक्षिक संस्थानों के रूप में स्कूल और कॉलेजों के सामने है। पिछले पांच महीने से स्कूल-कॉलेज बंद हैं और उसकी भरपाई के लिए आनलाइन माध्यम से पढ़ाई पर जोर दिया जा रहा है। लेकिन इसके लिए जरूरी संसाधनों के मामले देश भर में जो तस्वीर है, उसमें क्या आनलाइन शिक्षा की ओर बढ़ते कदम कोई बेहतर नतीजा दे सकते हैं?

क्या स्कूलों में पढ़ने वाले सभी विद्यार्थियों के लिए नियमित स्कूली पढ़ाई का यह एक कारगर विकल्प है? आनलाइन शिक्षा व्यवस्था को मुख्य विकल्प बनाने से पहले क्या जमीनी स्तर पर

इसके असर का अध्ययन किया गया है? अगर इस माध्यम पर निर्भरता की वजह से देश के कुल बच्चों का एक बड़ा हिस्सा पढ़ाई-लिखाई से वंचित हो जाए तो इसकी सार्थकता पर सवाल उठेंगे।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् यानी एनसीईआरटी की ओर से देश भर में कराए गए एक सर्वेक्षण में जो तस्वीर उभर कर सामने आई है, वह आनलाइन माध्यम से पढ़ाई की सीमाओं को ही रेखांकित करती है।

सर्वेक्षण के मुताबिक देश भर में सत्ताईस फीसद विद्यार्थियों के पास स्मार्टफोन या फिर लैपटॉप जैसे बुनियादी संसाधन ही नहीं हैं, जिसके जरिए वे आनलाइन कक्षाओं में शामिल हो सकें। अट्ठाईस फीसद लोगों ने बिजली की उपलब्धता को एक बड़ी समस्या बताया। फिर आर्थिक वजहों से इंटरनेट तक पहुंच और नेटवर्क की स्थिति की हकीकत किसी से छिपी नहीं है। बहुत सारे शिक्षक भी अभी तकनीकी तौर पर प्रशिक्षित और सहज नहीं हैं। ये तकनीक और संसाधनों के अभाव या उसकी मुश्किल से जुड़ी समस्याएं हैं, जिनके रहते आॅनलाइन शिक्षा अपने मकसद में नाकाम हो सकती है। इसके अलावा, सर्वेक्षण में ही विज्ञान और गणित जैसे विषयों के शिक्षण और उसे समझने में विद्यार्थियों को आने वाली दिक्कतों को दर्ज किया गया है।

यों भी, नियमित स्कूली पढ़ाई, कक्षा में शिक्षक से सीधे संवाद के मनोविज्ञान, देखरेख, सलाह और उसके असर की तुलना आनलाइन शिक्षा से नहीं की जा सकती। सवाल है कि इन हालात में आनलाइन पढ़ाई पर जोर देने का क्या आधार हो सकता है। कुछ समय पहले केरल में एक बच्ची संसाधनों के अभाव में आनलाइन कक्षा में शामिल नहीं हो सकी और यह स्थिति लंबे समय तक बने रहने के डर से उसने आत्महत्या कर ली। इस तरह की घटना को इक्का-दुक्का कह कर खारिज नहीं किया जा सकता। हमारे देश में ज्यादातर आबादी जिन हालात में गुजर-बसर करती है, उसमें अभाव और वंचना की स्थितियों का अंदाजा लगाना मुश्किल नहीं है।

यह ध्यान रखने की जरूरत है कि एनसीईआरटी के सर्वेक्षण में केंद्रीय विद्यालयों, नवोदय विद्यालयों और सीबीएसई से संबद्ध स्कूलों में पढ़ने वाले करीब अठारह हजार के आसपास ही बच्चे शामिल थे। देश भर में फैले बाकी सरकारी स्कूलों के बच्चों और उनके परिवारों की आर्थिक हालत के मद्देनजर यह अंदाजा ही लगाया जा सकता है कि आनलाइन शिक्षा पर

निर्भरता से कितनी बड़ी तादाद में बच्चों की पढ़ाई बाधित हो जाएगी या वे उसके दायरे से बाहर हो जाएंगे।

गरीब और बहुत सारे निम्न मध्यवर्गीय परिवारों में भी संसाधनों की उपलब्धता से लेकर घर की स्थितियां ऐसी होती हैं, जिसमें ऑनलाइन कक्षाओं में शामिल होना और गंभीरता से पढ़ाई कर पाना एक बड़ी चुनौती होती है। फिर पूर्णबंदी की मार से निकट भविष्य में गरीब तबकों के लोगों की आर्थिक स्थिति में शायद ही कोई सुधार आएगा कि वे अनिवार्य सामानों के अलावा अपने बच्चों की पढ़ाई के लिए लैपटॉप या स्मार्टफोन जैसे संसाधन ले सकेंगे। ऐसे में 'सबके लिए शिक्षा' जैसे नारों और शिक्षा का अधिकार कानून को कैसे जमीन पर उतारा जा सकेगा!

23 Aug

स्वच्छता की मिसाल

स्वच्छता को लेकर देश में जिस तरह की जागरूकता और जिम्मेदारी पिछले कुछ सालों में देखने को मिली है, उसी का परिणाम है कि आज सिर्फ इंदौर ही नहीं, कई शहर साफ-सफाई के मामले में अव्वल साबित हो रहे हैं। देश के चार हजार दो सौ बयालीस शहरों और एक करोड़ सतासी लाख लोगों के बीच किए गए स्वच्छता सर्वेक्षण में इंदौर एक बार फिर शीर्ष पर रहा है। यह लगातार चौथा साल है जब मध्य प्रदेश के इस शहर ने यह कीर्तिमान बनाया।

इंदौर ही नहीं, देश के जितने भी शहरों ने स्वच्छता के मामले में जो उपलब्धि हासिल की है, वह इस हकीकत को और पुष्ट करती है कि शहरों को साफ रखना कोई मुश्किलों भरा काम नहीं है, न नागरिकों के लिए, न स्थानीय प्रशासन के लिए। अगर हम चाहें तो अपने शहरों की किस्मत खुद बदल सकते हैं। लेकिन भारत के ज्यादातर शहरों की हालत देख कर यह काम जरा चुनौती भरा लगता है। शहरों को कैसे साफ-सुथरा रखा जाए, इस गंभीर समस्या और सवाल से देश के ज्यादातर शहर जूझ रहे हैं। पर अब हमें इसे किसी संकट के रूप में नहीं देखना चाहिए, बल्कि उन शहरों से प्रेरणा और सबक लेना चाहिए, जो ऐसा करके दिखा रहे हैं।

शहरों में साफ-सफाई के स्तर को मापने के लिए कई मानक तैयार किए जाते हैं। इनमें रिहायशी इलाकों और परिसरों से लेकर कार्यस्थलों की सफाई तक का संज्ञान लिया जाता है। शहरों को साफ रखने में आज सबसे ज्यादा समस्या कचरा प्रबंधन को लेकर है। हर शहर और महानगर इस संकट का सामना कर रहा है और इसीलिए कई बड़े शहरों में कचरे के पहाड़ देखने को मिल जाते हैं।

राजधानी दिल्ली भी इससे मुक्त नहीं है जहां सालों से कचरे के तीन बड़े पहाड़ हैं और इनकी वजह से शहर की हवा प्रदूषित हो रही है। पिछले कुछ सालों से जब भी दुनिया के सबसे प्रदूषित शहरों की सूची बनती है तो उसमें शीर्ष दस-बीस शहरों में भारत के कई शहर आ जाते हैं। शहरों की गंदगी भी वायु प्रदूषण का बड़ा कारण है। ऐसे में घूम-फिर कर बात शहरों की सफाई पर आ जाती है। जो शहर आज भी गंदगी और कचरे की समस्या से उबर नहीं पा रहे हैं, वहां कहीं न कहीं नागरिकों और स्थानीय निकायों दोनों में जिम्मेदारी का अभाव एक बड़े कारण के रूप में सामने आता है।

अगर राजधानी दिल्ली को देखें तो इस महानगर के कुछ हिस्से जिन्हें वीआइपी इलाके कहा जाता है, स्वच्छता के मामले में काफी आगे हैं, और नई दिल्ली नगरपालिका परिषद (एनडीएमसी) को दस लाख से ज्यादा आबादी वाले शहरों में तीसरा स्थान मिला है, जबकि इसी राजधानी के पूर्वी और उत्तरी दिल्ली को देश के दस गंदे शहरों में शामिल किया गया है। यह स्थिति देश के कई शहरों और राजधानियों में देखने को मिलेगी और समाज, प्रशासन व सरकारों के सामने बड़ा सवाल भी कड़ा करती है।

इंदौर शहर से सीखा जाना चाहिए कि कैसे वहां वर्षों से मौजूद कचरे के पहाड़ को खत्म कर दिया गया और यह इंदौर नगर निगम के प्रयास और इच्छाशक्ति का ही परिणाम था। प्रशासन के इन अथक प्रयासों ने नागरिकों को स्वच्छता के बारे में सोचने को मजबूर किया और इस तरह दोनों के समन्वय से अब इंदौर कचरा प्रबंधन के एक बेहतर मॉडल के रूप में भी सामने आया है। इसमें कोई संदेह नहीं कि देश के ज्यादातर शहरों के नगर निगमों की माली हालत भी अच्छी नहीं है।इनको मजबूत बनाने के प्रयास करने होंगे। अपने घर, इलाके और शहर को हम तभी साफ रख सकते हैं, जब भीतर एक नागरिक जिम्मेदारी का भाव पैदा हो।

24 Aug

नापाक चेहरा

अपने यहां दाऊद इब्राहिम की मौजूदगी को लेकर पाकिस्तान चौबीस घंटे के भीतर ही जिस तरह से पलटी मार गया, वह कोई हैरान करने वाली बात इसलिए नहीं है क्योंकि पाकिस्तान का शुरू से यही चरित्र रहा है। शनिवार को पाकिस्तान ने पहली बार यह कबूला कि दाऊद इब्राहिम उसी के यहां है और वहां उसकी संपत्तियां व बैंक खाते हैं। कराची के जिस घर में वह रहता है, उसका पता भी पाकिस्तान सरकार ने सार्वजनिक किया। यह भी बताया गया कि दाऊद के पास चौदह पासपोर्ट हैं।

पाकिस्तान सरकार की ओर से जारी अट्ठासी आतंकवादियों की सूची में भी दाऊद का नाम है। ये सब इस बात का प्रमाण हैं कि दाऊद पाकिस्तान में ही है और पूरी तरह से सरकार, सेना और आइएसआइ की सुरक्षा में रह रहा है। सवाल है कि पाकिस्तान पर अचानक ऐसा क्या संकट आया कि उसे अपने यहां दाऊद की मौजूदगी को दुनिया के समक्ष कबूलना पड़ा। और इससे भी बड़ा और चौंकाने वाला प्रश्न यह कि आखिर ऐसा क्या हुआ कि इस कबूलनामे के तत्काल बाद पाकिस्तान अपनी बात से मुकर गया। क्या पाकिस्तान सरकार पर सेना और आइएसआइ का दबाव पड़ा?

यह कोई छिपी बात नहीं है कि पाकिस्तान दुनिया के उन चंद देशों में शीर्ष पर है जो आतंकवाद फैलाने के लिए जिम्मेदार माने जाते हैं। कहना न होगा कि आतंकवाद पाकिस्तान की सरकारी नीति का अभिन्न हिस्सा है। इसीलिए वहां बड़ी संख्या में आतंकी संगठन काम कर रहे हैं। पाकिस्तान अपने यहां आतंकियों और उनके सरगनाओं को किस तरह से सुरक्षित पनाह मुहैया कराता है, यह दुनिया अच्छी तरह जानती है।

अमेरिका पर 9/11 के हमले के साजिशकर्ता और अलकायदा सरगना उसामा बिन लादेन का मामला इस बात का प्रमाण है। लादेन पाकिस्तान के ऐबटाबाद में सेना मुख्यालय के पास बने

एक घर में वर्षों से सुरक्षित रह रहा था और अमेरिका ने कार्रवाई करके उसे वहीं खत्म कर दिया था।

सवाल है कि क्या पाकिस्तान की सरकार और सेना को कभी इसकी भनक नहीं लगी कि सेना मुख्यालय जैसे संवेदनशील प्रतिष्ठान के पास अलकायदा का आतंकी रह रहा है। यही मामला दाऊद का भी है। मुंबई बम कांड के बाद भारत ने न जाने कितनी बार इस बात के पुख्ता सबूत दिए कि दाऊद पाकिस्तान में ही मौजूद है, लेकिन पाकिस्तान हुक्मरानों ने कभी इस बात को नहीं माना, बल्कि इसका खंडन ही किया गया। अब असलियत सामने है।

पिछले कुछ वर्षों से अमेरिका और पश्चिमी देशों के दबाव में पाकिस्तान पर भारी दबाव है कि वह अपने यहां मौजूद आतंकी संगठनों के खिलाफ कार्रवाई करे। वित्तीय कार्रवाई कार्यबल (एफएटीएफ) ने उस पर कड़ा शिकंजा कस रखा है और निगरानी सूची में डाल रखा है। अब खतरा जल्दी ही काली सूची में डाले जाने का मंडरा रहा है। अगर ऐसा हुआ तो पाकिस्तान को हर तरह से मिलने वाली अंतरराष्ट्रीय मदद बंद हो जाएगी।

इसीलिए पाकिस्तान अब आतंकियों के खिलाफ कार्रवाई का दिखावा कर रहा है। शनिवार को पंजाब के तरनतारन जिले में पाकिस्तान की ओर से घुसपैठ कर रहे पांच लोगों को सीमा सुरक्षा बल ने मार गिराया। इसके अलावा दिल्ली को विस्फोट से दहलाने के मकसद से घुसा इस्लामिक स्टेट का आतंकी भी पकड़ गया। इन दोनों के तार पाकिस्तान से जुड़े हैं। यह तो साफ है कि पाकिस्तान भले कितने दावे करे कि वह भारत के साथ शांति चाहता है, लेकिन घुसपैठ और विस्फोट की साजिशें उसकी मंशा को बताने के लिए काफी हैं।

25 Aug

चीन का सन्देश

पूर्वी लद्दाख में वास्तविक नियंत्रण रेखा पर भारतीय हिस्से में जमे चीनी सैनिकों को पीछे हटाने को लेकर चीन के प्रस्ताव के जवाब में भारत ने जिस तरह का सख्त रवैया दिखाते हुए जो जवाब दिया है, उसके निहितार्थ चीन को समझने चाहिए। रक्षा सेवाओं के प्रमुख जनरल बिपिन रावत ने

सोमवार को साफ कर दिया कि वास्तविक नियंत्रण रेखा पर यथास्थिति बहाल करने के लिए चल रही सैन्य और कूटनीतिक बातचीत का अगर कोई सकारात्मक नतीजा नहीं निकला तो भारतीय सशस्त्र सेनाएं सैन्य विकल्पों के लिए भी तैयार हैं। उनके इस बयान से स्पष्ट है कि भारत अब किसी भी सूरत में चीन के सामने झुकने वाला नहीं है।

चीन ने कहा है कि वह फिंगर-4 क्षेत्र से अब तभी हटेगा, जब भारत भी समान दूरी तक पीछे हटे। सवाल है कि अपने ही इलाके में आखिर भारत क्यों पीछे हटेगा! हकीकत यह है कि चीन ने वास्तविक नियंत्रण रेखा लांघ कर भारतीय क्षेत्र में कब्जा कर लिया है। पिछले तीन महीने से भारत-चीन सीमा पर जो अशांति चल रही है, उसे दूर करने के लिए अब तक हुई सैन्य स्तरों की वार्ताओं और कूटनीतिक प्रयासों का अपेक्षित नतीजा सामने नहीं आया है। ऐसे में अब चीन मामले को और विवादास्पद व पेचीदा बनाने के रास्ते पर चल पड़ा है।

सीमाओं को लेकर नए-नए विवाद खड़े करना चीन की पुरानी फितरत रही है। गलवान घाटी और पैंगोंग त्सो झील में चीन ने यही किया है। यह सर्वविदित तथ्य है कि ये इलाके भारतीय सीमा क्षेत्र में हैं। पंद्रह और सोलह जून की रात चीनी सैनिकों ने पहले भारतीय क्षेत्र में घुस कर भारतीय सैनिकों पर हमला किया और फिर वहां कब्जा जमा लिया। अब वह इस क्षेत्र को विवादित रूप दे रहा है और पीछे हटने के लिए भारत पर दबाव बना रहा है।

ताजा स्थिति यह है कि चीनी सेना फिंगर-5 से फिंगर-8 क्षेत्र के बीच पांच किलोमीटर इलाके में भारी साजो-सामान के साथ मौजूद है और इस क्षेत्र में वह स्थायी रूप से डेरा जमाने की तैयारी में है। इस वक्त जिस तरह के हालात हैं, उनसे इस बात के संकेत दूर-दूर तक नहीं मिल रहे कि चीन आसानी से मानने वाला है।अगर सैन्य स्तर की वार्ताओं और कूटनीतिक उपायों से मामला नहीं सुलझता है, तो जाहिर है भारत के पास सैन्य विकल्प ही बचता है। भारतीय सेना जिस तरह से तैयार है, वह इस बात का संकेत है कि जरूरत पड़ी तो चीनी सैनिकों को खदेड़ने के लिए सैन्य विकल्प पर भी विचार किया जा सकता है। लेकिन भारत अपनी ओर से ऐसा कोई कदम नहीं उठाना चाहता जिससे क्षेत्रीय शांति पर आंच आए। पर साथ ही भारत यह साफ कर चुका है कि अगर चीन ने भारतीय क्षेत्र से अपने सैनिकों नहीं हटाया तो उसके पास इस स्थिति से निपटने के लिए सारे विकल्प खुले हुए हैं।

भारत और चीन के बीच सीमा विवाद दशकों पुराना है। साढ़े चार हजार किलोमीटर से ज्यादा लंबी सीमा पर समय-समय पर घुसपैठ और कब्जे करके चीन इस तरह के नए विवादित क्षेत्रों को जन्म देता रहा है। डोकलाम से लेकर देपसांग तक और पूर्वी लद्दाख में उसका एक-सा चरित्र रहा है। सवाल है कि ऐसे कितने विवाद और खड़े करेगा चीन। भारत के लिए यह चुनौतीभरा वक्त इसलिए भी है कि अगर जल्दी ही फिंगर-4 क्षेत्र से चीनी सैनिकों को नहीं हटाया गया, तो वह लंबे समय तक इस क्षेत्र में बना रह सकता है। इसलिए अब जरूरत है कि भारत चीन को उसी की भाषा में जवाब दे।

26 Aug

आतंक का दायरा

राजधानी दिल्ली में एक संदिग्ध आतंकी की गिरफ्तारी और उत्तर प्रदेश में उसके घर से हथियारों के जखीरे की बरामदगी निश्चित रूप से पुलिस और खुफिया तंत्र की एक बड़ी कामयाबी है, जिसने एक बड़े आतंकी हमले की साजिश को नाकाम कर दिया। इससे यह भी साबित होता है कि अगर समूचा तंत्र एक बेहतर तालमेल और सक्रियता के साथ काम करे तो किसी बड़े आतंकी हमले या उसकी योजना को समय रहते नाकाम किया जा सकता है। गौरतलब है कि दिल्ली के धौलाकुआं इलाके में एक मुठभेड़ के बाद पुलिस के स्पेशल सेल की टीम ने संदिग्ध मोहम्मद मुस्तकीम उर्फ अब्दुल युसूफ को गिरफ्तार किया।

उसके तीन अन्य संबंधियों को भी पूछताछ के लिए हिरासत में लिया गया है। अब्दुल युसूफ की निशानदेही पर उत्तर प्रदेश के बलरामपुर स्थित उसके घर से दो आत्मघाती जैकेट, घातक विस्फोटकों सहित कई आपत्तिजनक सामान बरामद किया। अंदाजा लगाया जा सकता है कि अगर समय रहते वह पकड़ में नहीं आया होता तो देश को एक बार फिर किस तरह की आतंकी घटना का सामना करना पड़ सकता था।

दरअसल, कुछ साल पहले तक इसी तरह दिखने में छोटे स्तर पर काम करने वाले लोगों को जरिया बना कर बड़े आतंकी संगठनों ने देश के कई इलाकों को दहलाया था। सिलसिलेवार बम धमाकों से लेकर सीधे हमलों के जरिए आतंक परोसने वालों ने आम लोगों के भीतर आतंकवाद को लेकर एक तरह का दहशत कायम कर दिया था। यह कोई छिपा तथ्य नहीं रहा है कि सीमा

पार के ठिकानों से संचालित आतंकवादी संगठनों के सदस्य हमारे देश के युवाओं तक पहुंच बना कर आतंकी गतिविधियों में उनका इस्तेमाल करते हैं।

वे हर वक्त पुलिस की ओर से किन्हीं वजहों से जरूरी चौकसी और निगरानी में कमी होने का फायदा उठा कर अपनी मंशा को कामयाब करने की ताक में होते हैं। लेकिन हाल के कुछ सालों में पुलिस की ओर से अब खुफिया तंत्र और सूचनाओं के जाल का विस्तार किया गया है और साधारण दिखने वाली बातों का भी गंभीरता से मूल्यांकन किया जाता है। यही वजह है कि ऐसे मामले भी सामने आने लगे हैं जिनमें किसी वारदात को अंजाम देने के पहले ही उसका पता लगा लिया जाता है। दिल्ली में संदिग्ध आतंकी की गिरफ्तारी और भारी पैमाने पर विस्फोटकों की ताजा बरामदगी को भी इसी कड़ी में देखा जा सकता है।

निश्चित रूप से इसे पुलिस की मेहनत, चौकसी और संदिग्धों पर निगरानी का हासिल कहा जा सकता है। लेकिन इससे यह भी जाहिर होता है कि जमीनी स्तर पर वैश्विक पैमाने पर काम करने वाले आतंकी संगठनों की पहुंच है और वे कमजोर मनोबल वाले युवाओं को मामूली लोभ या गलत धार्मिक व्याख्याओं के जरिए बहका कर उनका अतिवादीकरण करने की कोशिश करते हैं। निगरानी तंत्र के जाल में आकर आमतौर पर वैसे युवा तो पकड़ में आ जाते हैं, लेकिन जरूरत उनके असली स्रोत पर चोट करने की है।

अब यह एक जगजाहिर तथ्य है कि जैश-ए-मोहम्मद और लश्कर-ए-तैयबा जैसे कई खतरनाक आतंकी संगठन पाकिस्तान स्थित ठिकानों से अपनी गतिविधियां संचालित करते हैं, जो न केवल सीमावर्ती इलाकों में सीधे हमले करते हैं, बल्कि देश के अन्य इलाकों में भी घुसपैठ करके अपनी मंशा का विस्तार करने की कोशिश करते हैं। जाहिर है, एक ओर जहां पुलिस और खुफिया महकमे को हर स्तर पर निगरानी, चौकसी और तत्काल कार्रवाई के तंत्र को और ज्यादा सक्रिय रखने की जरूरत है, वहीं समाज के स्तर पर भी सरकार को नई और सकारात्मक योजनाओं के साथ युवाओं को आतंकियों के जाल में फंसने से बचाने की पहलकदमी करनी होगी।

27 Aug

महामारी के संवाहक

वैश्विक महामारी कोरोना के संक्रमितों की संख्या भारत में इकतीस लाख को पार कर गई है। संक्रमण को रोकने के तमाम इंतजामों के बावजूद इसमें अपेक्षित कामयाबी नहीं मिल पा रही है। खासकर सामुदायिक संक्रमण की खतरनाक स्थिति न आने देने के मकसद से समूचे देश में सख्त नियम-कायदे लागू हैं। पर विडंबना है कि इन नियमों पर अमल को लेकर जन-सामान्य के बीच भी कुछ हद तक कोताही बरती जा रही है।

फिर ऐसे लोगों और समूहों की ओर से लापरवाही बरतने के बड़े उदाहरण सामने आ रहे हैं, जिन पर खासकर इसके संक्रमण पर काबू पाने और इससे बचाव के संदेश का प्रसार करने का दायित्व सबसे ज्यादा है।

मसलन, पंजाब के बठिंडा स्थित एम्स यानी अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान के एक आयोजन में उच्चाधिकारियों और डॉक्टरों ने यह ध्यान रखना जरूरी नहीं समझा कि कार्यक्रम में शिरकत करने और तस्वीरें खिंचवाने के क्रम में जिस तरह का जमावड़ा हुआ, उसमें संक्रमण से बचाव के सबसे मुख्य नियमों को ही ताक पर रख दिया गया। जो तस्वीर सामने आई है, उसमें शामिल अधिकारी, बाकी डॉक्टर और अन्य लोग एक दूसरे के बेहद करीब और बिना मास्क पहने खड़े हैं। बहुत कम लोगों ने मास्क को ठीक से पहना हुआ है।

दरअसल, बठिंडा के इस मामले के अलावा भी देश के अलग-अलग राज्यों से ऐसी खबरें आईं, जिसमें किसी नेता के स्वागत के लिए लोगों के जमावड़े, उद्घाटन जैसे किसी सरकारी कार्यक्रम या धार्मिक आयोजन में आपसी दूरी बरतने या फिर मास्क पहनने के नियम का भारी उल्लंघन हुआ। मगर न तो आयोजकों या नेताओं ने अपने आयोजन में शामिल होने वालों को संक्रमण से बचाव के उपायों पर अमल करने पर जोर दिया और न ही स्थानीय प्रशासन ने ऐसे जमावड़ों में नियमों को धता बताए जाने पर कोई कार्रवाई की।

SANSAR EDITORIAL

ऐसे में सहज ही अंदाजा लगाया जा सकता है कि वायरस के फैलने के मुख्य उपायों का ही खयाल नहीं रखा जाएगा, तो स्थिति किस हद तक गंभीर हो जा सकती है। बठिंडा के जिस कार्यक्रम में नियमों के पालन में व्यापक लापरवाही बरती गई, बाद में उसमें शामिल होने वालों में से आठ लोग संक्रमित पाए गए।

अब क्या गारंटी है कि उन लोगों ने बाकियों को संक्रमित नहीं किया होगा! सवाल है कि जो संस्थान, उसके अधिकारी और डॉक्टर मौजूदा समय में कोरोना संक्रमितों के इलाज, उनकी देखभाल और नियमों को लेकर मरीजों को सचेत करने की ड्यूटी पर तैनात किए गए हैं, खुद उन्होंने ही सारे कायदों को ताक पर रख कर तस्वीर खिंचवाना जरूरी क्यों समझा!

गौरतलब है कि खुद प्रधानमंत्री भी अलग-अलग मंचों से और पंद्रह अगस्त के स्वतंत्रता दिवस समारोह में भी संक्रमण से बचाव के लिए इन उपायों को लेकर सजग रहने की बात कही है। संक्रमण पर काबू पाने के लिए मुख्य रूप से दो नियमों के पालन को लेकर समूचे देश में सख्ती बरती जा रही है। पहला नियम है चेहरे पर सही तरीके से मास्क पहनना और दूसरा, एक दूसरे से कम से कम दो गज दूर रहना। माना जा रहा है कि अगर इन दो नियमों पर ठीक से अमल सुनिश्चित करा लिया गया तो संक्रमण के बढ़ने की दर को काबू में लाया जा सकता है।

लगभग सभी राज्यों में इसे लागू करने को लेकर जागरूकता अभियान चलाने से लेकर इसके उल्लंघन पर जुर्माना लगाने जैसी सख्ती भी बरती जा रही है। लेकिन अफसोस की बात है कि जिन लोगों को देख कर आम लोग बचाव के तरीकों को लेकर सावधानी बरतने की सीख ले सकते हैं, संक्रमण को रोकने में भूमिका निभा सकते हैं, खुद वही इन नियमों का पालन करना जरूरी नहीं समझ रहे।

28 Aug

कर्ज का संकट

जरूरतमंदों को कर्ज देने के लिए व्यावसायिक बैंकों पर भारतीय रिजर्व बैंक पिछले कुछ समय से जिस तरह दबाव बना रहा है, उससे यह स्पष्ट है कि इस वक्त बैंक आसानी से कर्ज दे नहीं रहे हैं।

पिछले कुछ महीनों के दौरान उधारी की दर में आई गिरावट भी इस बात को पुष्ट करती है। इसमें कोई संदेह नहीं कि अर्थव्यवस्था जिस संकट और अनिश्चतता के दौर से गुजर रही है, उसमें बैंक किसी भी तरह का जोखिम लेने से बच रहे हैं। इसलिए केंद्रीय बैंक ने व्यावसायिक बैंकों से एक बार फिर साफ-साफ कहा है कि वे जरूरत से ज्यादा सतर्कता बरतेंगे तो खुद संकट में पड़ जाएंगे। कोरोना महामारी से बचाव के उपाय के तौर पर की गई पूर्णबंदी के कारण देश के छोटे-बड़े उद्योगों को जिस तरह से धक्का लगा है, उससे अर्थव्यवस्था के लिए वाकई गंभीर संकट खड़ा हो गया है। लाखों छोटे और मझौले उद्योग तो बंद हो गए हैं। हालत यह है कि लोग अपना दोबारा से काम शुरू कर सकें, इसके लिए उनके पास पर्याप्त पैसा नहीं है। इसलिए रिजर्व बैंक का जोर ऐसे उद्योगों और व्यक्तियों को कर्ज मुहैया कराने पर है।

अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाने के लिए सरकार ने अब तक जो राहत पैकेज जारी किए हैं, उनमें भी जोर कर्ज देने पर ही है। लेकिन सवाल है कि आखिर क्यों बैंक कर्ज नहीं दे रहे हैं और क्यों जरूरतमंद भी कर्ज लेने से बच रहे हैं। अगर बैंक कर्ज नहीं देंगे और लोग व उद्योग कर्ज लेने से बचेंगे, तो बाजार में नगदी का प्रवाह का कैसे बनेगा? केंद्रीय बैंक ने समय-समय पर नीतिगत दरों में जो कटौती की है, उसका मकसद ही ब्याज दरों को नीचे लाना है, ताकि कर्ज सस्ता हो और कर्ज लेने वाले आगे आएं। लेकिन इस वक्त कर्ज देने वाले और लेने वाले जिन मुश्किलों का सामना कर रहे हैं, उनमें एक बड़ा संकट बाजार में मांग नहीं होना है। पूर्णबंदी में लाखों लोगों की नौकरियां चली गईं और उससे भी बड़ी तादाद उन लोगों की है जिनके वेतन में भारी कटौती हो रही है। ऐसे में कोई कैसे घर, गाड़ी या निजी आवश्यकता के लिए कर्ज लेने की सोच सकता है! हालत यह है कि ज्यादातर छोटे-मझौले उद्योग पहले से भारी कर्ज में दबे पड़े हैं। वे ऐसे में और कर्ज लेकर नई आफत गले में क्यों डालेंगे? उद्योग पहले ही से पुराने कर्जों की माफी और पुनर्गठन की मांग कर रहे हैं।

व्यावसायिक बैंकों की सबसे बड़ी दिक्कत यह है कि वे पहले से ही एनपीए की समस्या से जूझ रहे हैं। हालांकि यह स्थिति बैंकों के अपने कुप्रबंधन और कर्ज बांटने में घोर अनियमितता के कारण ही उत्पन्न हुई है। यह भी किसी से छिपा नहीं है कि राजनीतिक दबावों में दिए गए कर्जों की वसूली आसान नहीं होती। कर्ज वसूली की कानूनी प्रक्रिया भी इतनी लंबी और जटिल है कि वर्षों की लड़ाई के बाद भी कर्ज के मामूली हिस्से की वसूली की संभावना नहीं रह जाती। कर्ज

बांटने से भी ज्यादा बड़ी जरूरत बाजार में मांग पैदा करने की है। जब तक लोगों के पास रोजगार नहीं होगा और हाथ में पैसा नहीं आएगा, तो क्रयशक्ति भी नहीं बढ़ेगी। इसके अलावा, जिन लोगों के पास पैसे हैं भी, वे अनिश्चितता के खौफ की वजह से खर्च करने से घबरा रहे हैं। ऐसे में अर्थव्यवस्था को लेकर लोगों का भरोसा बहाल करना फिलहाल केंद्रीय बैंक, व्यावसायिक बैंकों और सरकार के समक्ष बड़ी चुनौती है।

29 Aug

पर्यावरण पर नई दृष्टि जरूरी

कई वर्षों से पर्यावरण इतिहास के पठन-पाठन से जुड़े होने के कारण यह गहरा एहसास है कि अर्थशास्त्र, भूगोल, जीव विज्ञान और रसायन विज्ञान जैसे विषयों पर जानकारी के अभाव में उसे ठीक से समझ पाना काफी मुश्किल है। इस मायने में पर्यावरण अध्ययन का संबंध बहुविषयक है। इसके दायरे में वह सब आता है जिससे मानव सभ्यता विकसित हुई और उसका ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य क्या है। हम न केवल जानवरों, पौधों, अन्य जीवों, पानी, मिट्टी, वायु, महासागर, पृथ्वी की पपड़ी, ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन और महासागर की धाराओं आदि का अध्ययन करते हैं, बल्कि लोगों के साथ उनके संबंधों का भी अध्ययन करते हैं। वे एक-दूसरे के साथ इस तरह गुथे हुए हैं कि विज्ञान और भूगोल से लेकर मानविकी तक जैसे कई विषय इसमें समा जाते हैं।

इसी मायने में नई शिक्षा नीति, 2020 में बहुविषयक पाठ्यक्रम का घोषित उद्देश्य लंबे समय से चली आ रही बाधा को कम कर सकता है। 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनपीई) को 1992 में 'पर्यावरण संरक्षण' को एक कोर के रूप में शामिल करने के लिए संशोधित किया गया था, जिसके आसपास एक राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा बाद में विकसित की गई थी। कक्षा 3 से 5 के छात्रों को स्कूलों में पर्यावरण के बारे में पढ़ाया जाता था। 2006 में सुप्रीम कोर्ट के निर्देश के बाद, पर्यावरण स्नातक स्तर पर भी अध्ययन का अनिवार्य विषय बन गया। भले ही पर्यावरण शिक्षा स्कूल पाठ्यक्रम का अनिवार्य हिस्सा रही हो, यह जटिल पर्यावरणीय मुद्दों को हल करने से नहीं जुड़ी है। दुर्भाग्य से, सिर्फ किताबी पढ़ाई से छात्रों में पर्यावरण की समझ नहीं विकसित की जा सकती है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि एनपीई अपने समय से आगे का विचार था और पिछले कुछ दशकों में भारत ने उसके आधार पर ही तीव्र आर्थिक प्रगति की। लेकिन अब जब दुनिया में तेजी से जबरदस्त बदलाव हो रहे हैं, इसमें बदलाव की जरूरत थी। आज हमें जलवायु परिवर्तन जैसी नई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन और प्राकृतिक संसाधनों का दुरुपयोग आज काफी अहम हो गया है। जब हम सतत विकास की बात करने लगे हैं तो यह जरूरी है कि हमारी शिक्षा नीति में पर्यावरण जागरूकता पर विशेष जोर हो और शिक्षा, समस्याओं को सुलझाने से जुड़ी हो।

हमें इस पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है कि ऐसा क्यों है कि पर्यावरण के अच्छे और बुरे के बारे में बच्चों को पढ़ाए जाने के बावजूद समाज का व्यवहार नहीं बदला है। ज्ञान प्रदान करने के पारंपरिक तरीकों ने वांछित परिणाम नहीं दिया है।

इसका समाधान इस तथ्य में निहित है कि प्रकृति के साथ संबंध केवल प्रकृति में ही बनाया जा सकता है। यह केवल छात्रों के प्रकृति के साथ साक्षात्कार से सम्भव है। हमें उन्हें प्रयोगों में शामिल करना और चीजों को स्वयं बढ़ाना सिखाना होगा, ताकि वे प्रकृति प्रेमियों के रूप में विकसित हो सकें। पर्यावरण शिक्षा का बेहतर तरीका यह है कि छात्र शिक्षक वर्ग के साथ जंगल एवं विभिन्न स्थानों का भ्रमण कर सच्चाई का अनुभव करें। हमें स्कूलों में गार्डन स्थापित करना चाहिए जो न केवल छात्रों को पर्यावरण से जोड़ेगा, बल्कि उनके जीव विज्ञान के पाठों को भी जीवंत करेगा। इस तरह का सीखना न केवल आसान है, बल्कि स्थायी भी है। इसी तरह, रीसाइक्लिंग पर व्यावहारिक कौशल, कचरे का निपटारा और छात्रों को जैविक खेती की शिक्षा प्रदान की जा सकती है। इन सब की बात इस नई शिक्षा नीति में की गई है।

नई शिक्षा नीति में पर्यावरणीय जागरूकता, जल और संसाधन संरक्षण और स्वच्छता शामिल हैं; और स्थानीय समुदायों का सामना करने वाले महत्वपूर्ण मुद्दों के ज्ञान पर विशेष जोर दिया गया है। पर्यावरण शिक्षा में जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, अपशिष्ट प्रबंधन और स्वच्छता के विषयों को शामिल किया गया है। यह जैविक विविधता के संरक्षण, जैविक संसाधनों के प्रबंधन और जैव विविधता, वन और वन्यजीव संरक्षण के बारे में भी बात करता है। ये तत्व वास्तव में स्थायी भविष्य के लिए अनिवार्य हैं। हम जानते हैं कि शिक्षित आबादी आर्थिक विकास की कुंजी है। तेजी से वैश्वीकृत होती अर्थव्यवस्था में यह भी आवश्यक है कि आर्थिक विकास सतत विकास

से जुड़ा हो। यह संयुक्त राष्ट्र के एक शीर्ष एजेंडे का हिस्सा भी है और इस पर भारत ने भी हस्ताक्षर किए हैं।

हाल के वर्षों में मशीनों और डिजिटल प्रौद्योगिकी में प्रगति ने नए अवसरों की पेशकश की है। हम युवाओं को नौकरियों के लिए तैयार करना चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि हमारी औपचारिक शिक्षा रोजगार और आवश्यक कौशल से जुड़ी हो। यह विज्ञान, सामाजिक विज्ञान और मानविकी के छात्रों के बीच बहु-विषयक क्षमताओं को विकसित करके हासिल किया जा सकता है।

भारत की जनसांख्यिकीय संरचना ने भी यह मांग की कि युवाओं को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान की जाए। भारत की आबादी का 62 प्रतिशत 15 से 59 के आयु वर्ग में है और 35 वर्ष से कम उम्र की यहां दुनिया की सबसे बड़ी आबादी है। भारत की आबादी में इस आयु वर्ग का हिस्सा 2036 में सर्वाधिक, 65 प्रतिशत होगा। इसलिए आश्चर्य की बात नहीं कि सरकार ने उसी वर्ष तक नई शिक्षा नीति को हासिल करने का लक्ष्य रखा है। देखना होगा कि सरकार इससे भी बड़ी चुनौती, जो बहुविषयकता पर आधारित पाठ्यक्रम विकसित करने की है, से किस प्रकार निपटती है और अपने आपको राजनीतिक मजबूरियों से कैसे दूर रख पाती है।

Join our Telegram Channel for Regular Updates in Hindi for UPSC

Click Here to Join

SANSAR EDITORIAL